* ओ३म् *

आर्य्य ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के

* सहायक सज्जनों की सूची *

१ श्रीमान् माननीय राजा साहेब बहादुर छुरास्टेट (रायपुर C.P.
२ ,, ,, महाराजा रामकृष्ण पुरीजी- नागपुर C. P.
३ ,, ,, महाराजा साहेब बहादुर देवास C. I.
४ ,, ,, महाराजा साहेब बहादुर उचेहरा C.I.
५ ,, ,, राजा लीलाधरजी साहेब बहादुर शक्तिस्टेट
६ ,, ,, राजा रघुराजसिंह जी वर्मा पिडरिया C. P.
७ ,, ,, राजा उदवन्तसिंह जी साहेब पडरियास्टेट
८ ,, ,, राजा साहेब बहादुर ओडारबांध C. P.
९ ,, ,, राजा खुशालसिंह जी वर्मा करगी स्टेट
१० ,, ,, राजा विश्वनाथसिंह जी वर्मा इमलाई स्टेट
११ ,, ,, राजा साहेब बहादुर पालम गंज राज्य
१२ ,, ,, राजा साहेब बहादुर सेमलियां राज्य R.P.
१३ ,, ,, महाराजा साहेब बहादुर ध्रांगधरा स्टेट
१४ श्रीमती ,, महारानी साहिबा महोदया राजनाद गांव C.P.
१५ श्रीमान् ,, राजा दुर्गानारायणसिंह जी तिरवा राज्य
१६ ,, ,, महाराजा साहेब बहादुर पन्ना स्टेट C.I.
१७ ,, ,, महाराजा साहेब बहादुर बड़वानी स्टेट C.I.
१८ ,, ,, राजा इन्द्रप्रताप नारायणसिंहजी वर्मा रेहुआ रा.
१९ ,, ,, राजा खलकसिंहजी साहेब बहादुर खलियाधा रा
२० ,, ,, राजा प्रतापसिंहजी देव बहादुर कुड़वार स्टेट

धर्मोपदेश रत्नमाला

तृतीय भागः।

* ईश्वरप्रार्थना *

ओ३म्

अग्नेनय सुपथा रायेअस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराण मेनो
भुयिष्ठान्ते नमउक्तिविधेम॥

यजु० अ० ४० मं १६।

अग्ने प्रकाशकर्त्ता, तम दूर हो हमारा।
वेदिक प्रथा विदित हो, मिट जाय शोक सारा॥
ऐसी दया दिखाओ, हे दीन बन्धु स्वामिन्।
हम सर्व प्रसन्नता से, दर्शन लहें तुम्हारा।
मति शुद्ध हो सदा ही, उपकार में रहें नित॥
तव ओ३म् नाम हमको, होवे सदैव प्यारा॥
आरोग्य और सुखी हों, प्राणी समस्त जग के।
विनती है यह हमारी, सुनलो जगत अधारा॥



✽ श्री स्वामी शंकराचार्यरचित ✽

प्रश्नोत्तरी ॥ २ ॥

अपार--संसार--समुद्रमध्ये,निमज्जतो मे शरणं किमास्ति ।
गुरो कृपालो कृपया वदैतद्, विश्वेसपादांबुज दीर्घनौका ॥ १ ॥

अर्थ--दयालु गुरु ! कृपा पूर्वक कथन करो कि इस अपार-संसार समुद्र के बीच में मुझे डूबते का क्या सहारा है ? जगदीश्वर के चरण कमलरूपी दीर्घनौका ही सहारा है।

बद्धोहि को यो विषयानुरागी, का वा विमुक्तिर्विषये विरक्तिः ।
कोवास्ति घोरो नरकः स्वदेह, स्तृष्णाक्षयस्स्वर्गपदं किमस्ति ॥२॥

अर्थ--बंधा हुआ कौन है ? जो विषय भोगो में फंसा हुआ है। मुक्ति क्या है ? विषय भोगों से छुटकारा पाना। घोर नरक क्या है ? अपनी देह। स्वर्गपद क्या है ? तृष्णा का नाश।

संसारहृत्कः श्रुतिजात्मबोधः, को मोक्ष हेतुः कथितस्सएव ।
द्वारंकिमेकन्नरकस्य नारी, का स्वर्गदा प्राणभृतामहिंसा ॥ ३ ॥

अर्थ--संसार को दूर करनेवाला क्या है ? वेदों से उत्पन्न हुआ आत्मज्ञान। मोक्ष का हेतु क्या है ? वही आत्मज्ञान। नरक का मुख्य द्वार क्या है ? नारी। स्वर्ग देनेवाली वस्तु क्या है ? जीवों की अहिंसा अर्थात् किसी प्राणी को दुःख नहीं पहुंचाना।

शेते सुखं कस्तु समाधिनिष्ठो, जागर्ति को वा सदसद्विवेकी ।
के शत्रवस्सन्ति निजेन्द्रियाणि, तान्येव मित्राणि जितानियानि।४।

अर्थ--सुख से कौन सोता है ? जो समाधि में तत्पर है। जागता कौन है ? जो सत् असत् का विवेक करता है। शत्रु कौन है ? अपनी ही इन्द्रियां। यदि वश में करली जांय तो यही मित्र हैं।

को वा दरिद्रोहि विशालतृष्णः, श्रीमांश्च को यस्य समस्ततोषः
जीवन्मृतः कस्तु निरुद्यमोयः, कोवामृतः स्यात्सुखदा निराशा ।५।

अर्थ-दरिद्री कौन है ? जिसकी बड़ी तृष्णा है ? धनवान् कौन है? जिसे सर्वथा सन्तोष है। जीता हुआ मरा कौन ? जो कोई उद्यम नहीं करता है। अमृत कौन है ? जिसने इन्द्रियजनित सुख भोगों की वांछा छोड़ दी है।

पाशोहि को यो ममताभिमानः, संमोहयत्येव सुरेवका स्त्री।
को वा महान्धो मदनातुरो यो, मृत्युश्च को वाऽपयशस्स्वकीयम् ।६।

अर्थ--पाश में कौन फंसा है ? जो ममता का अभिमानी है। मदिरा के समान कौन मोह उत्पन्न करने वाली है ? स्त्री। अत्यन्त अन्धा कौन है ? जो कामदेव के बश हो आतुर है। मृत्यु क्या है ? अपना अपयश अर्थात् अपनी बदनामी।

को वा गुरुर्योहि हितोपदेष्टा, शिष्यस्तु को यो गुरुभक्त एव।
को दीर्घरोगो भव एव साधो, किमौषधन्तस्य विचार एव ॥ ७॥

अर्थ-गुरु कौन है ? जो हित का उपदेश करे। शिष्य कौन है ? जो गुरु का भक्त है। दीर्घरोग क्या है ? यह संसार। औषधि इस की क्या है ? विचार।

किं भूषणाद्भूषणमस्ति शीलं, तीर्थम्परं किं स्वमनो विशुद्धम्।
किमत्रहेयं कनकं च कान्ता, श्राव्यं सदा किं गुरुवेदवाक्यम् ।८।

अर्थ-सब भूषणों में भूषण क्या है ? शील। सब से बड़ा तीर्थ क्या है ? अपना शुद्ध मन। छोड़ने योग्य क्या है ? सोना और स्त्री अर्थात् लोभ और विषय-भोग। निरन्तर सुनने योग्य क्या है ? गुरु और वेद के वाक्य।

के हेतवो ब्रह्मगतेस्तु सन्ति, सत्सङ्गतिर्दान विचार तोषाः।
के सन्ति सन्तो खिल वीतरागा, अपास्तमोहा स्शिवतत्त्वनिष्ठाः।९।

अर्थ-ब्रह्मप्राप्ति के हेतु क्या हैं ? सत्संग, दान, बिचार और

सन्तोष। सन्त कौन है ? जिन में रागद्वेष नष्ट होगये हैं, जिनका मोह जाता रहा है और जो आनन्दमय आत्मतत्व में लवलीन हैं।

को वा ज्वरःप्राणभृतां हि चिन्ता, मूर्खोऽस्ति को यस्तुविचारहीनः
कार्याप्रिया का शिवविष्णुभक्तिः, किं जीवनं दोषविवर्जितंयत् १०

अर्थ-प्राणियों का ज्वर क्या है ? चिन्ता ॥ मूर्ख कौन है ? जो विचार हीन है। कौन प्रिय करने योग्य है ? शिव और विष्णु की भक्ति। श्रेष्ठ जीवन क्या है ? जो दोष रहित है।

विद्याहि का ब्रह्मगतिप्रदाया, बोधोहि को यस्तु विमुक्तिहेतुः
को लाभ आत्मावगमोहि यो वै, जितं जगत् केन मनो हि येन।११

अर्थ-श्रेष्ठ विद्या कौनसी है ? जो ब्रह्मगति को दे सके। बोध क्या है ? जो मोक्षप्राप्ति का साधन हो। लाभ क्या है ? आत्मज्ञान की प्राप्ति। जगत् को किसने जीत लिया है ? जिसने अपना मन जीत लिया है।

शूरान्महाशूरतमोस्ति को वा, मनोजबाणैर्व्यथितो न यस्तु।
प्राज्ञोथ धीरश्च समस्तु को वा, प्राप्तो न मोहं ललनाकटाक्षैः ॥१२॥

अर्थ-सब में बड़ा शूरवीर कौन है ? जो कामदेव के बाणों से पीड़ित नहीं होता है। बुद्धिमान, धीर और समदृष्टि कौन है ? जो स्त्रियों के कटाक्षों से मोह को प्राप्त नहीं होता है।

विषाद्विषं किं विषयास्समस्ता, दुःखी सदा को विषयानुरागी।
धन्योऽस्ति को यस्तु परोपकारी, कः पूजनीयः शिवतत्वनिष्ठः १३

अर्थ-सब विषों में तेज विष कौनसा है ? इन्द्रिय विषय भोग। सदा दुःखी कौन है ? जो इन्द्रिय विषयों में फसा हुआ है धन्य कौन है ? जो परोपकारी है। सन्मान के योग्य कौन है ? जो आनन्द मय आत्मतत्त्व में लवलीन है।

सर्वास्ववस्थास्वपि किन्न कार्यम्, स्नेहश्च पापं विदुषा प्रयत्नात्।
किं वा विधेयो गहनश्च धर्म्मः, संसारमूलंहि किमस्तिचिन्ता १४

अर्थ-सब अवस्थाओं में बुद्धिमान् को प्रयत्न से क्या नहीं करना चाहिये ? पाप और (पुत्रपौत्रादि में) मोह। बुधिमान् को यत्न से क्या करना चाहिये ? गहन धर्म। संसार की जड़ क्या है ? चिन्ता।

विज्ञान्महाविज्ञतमोऽस्ति को वा, नार्य्या पिशाच्या न च वंचितोयः।
का शृंखला प्राणभृतां हि नारी, दिव्यंव्रतं किं च समस्तदैन्यम्।१५

अर्थ--सब से बड़ा ज्ञानी कौन है ? जो पिशाचिनी नारी के वश में नहीं आया है। प्राणियों के लिये बन्धन क्या है ? नारी अर्थात् विषय भोग। पवित्र व्रत क्या है ? सब पर दया करना।

ज्ञातुन्नशक्यं च किमस्ति सर्वैः, योपिन्मनोयच्चरितं तदीयं।
कादुस्त्यजा सर्वजनैर्दुराशा, विद्याविहीनः पशुरस्तिकोवा ॥१६॥

अर्थ-ऐसी क्या चीज है जिसे कोई नहीं जान सकता है ? स्त्री का मन और उसका चरित। ऐसी क्या चीज है जिसे सब मनुष्य बड़ी कठिनता से छोड़ सकते हैं ? दुराशा अर्थात् विषय भोग की वाञ्छा। पशु कौन है ? जो विद्याहीन है।

वासो न संगस्सह कैर्विधेयो, मूर्खैश्च नीचैश्च खलैश्च पापैः।
मुमुक्षुणां किं त्वरितं विधेयं, सत्संगतिर्निर्ममतेशभक्तिः ॥ १७॥

अर्थ--किन के साथ संग और वास नहीं करना चाहिये ? मूर्ख नीच, खल और पापियों के साथ। मोक्ष चाहनेवालों को क्या करना चाहिये ? सत्संग, ममता का त्याग और ईश्वर की भक्ति।

लघुत्वमूलञ्च किमर्थितैव, गुरुत्वमूलं यदयाचनञ्च।
जातोहि को यस्य पुनर्नजन्म, को वा मृतो यस्य पुनर्नमृत्युः।१८

अर्थ-लघुता की जड़ क्या है ? मांगना। बड़ेपन की जड़ क्या है ? परमपद मांगना। जन्मा कौन है ? जिसका फिर जन्म नहीं है। अर्थात् जो संसारचक्र से छूटगया है। मरा कौन है ? जिसकी फिर मृत्यु नहीं है

मूकोऽस्ति को वा वधिरश्च को वा, वक्तुं न युक्तं समये समर्थः।
तथ्यं सुपथ्यं न शृणोति वाक्यं, विश्वासपात्रं न किमस्तिनारी।१९

अर्थ-गूंगा कौन है ? जो समय पर ठीक नहीं कह सके । बहरा कौन है ? जो अच्छे वाक्यों को नहीं सुने । विश्वासपात्र कौन नहीं है ? नारी ।

तत्वं किमेकं शिवमद्वितीयं, किमुत्तमं सच्चरितं यदास्ति ।
त्याज्यं सुखं किं स्त्रियमेवसम्यग्, देयं परं किं त्वभयं सदैव॥२०॥

अर्थ-एक तत्व क्या है? आनन्दमयआत्मा जो एक ही है। उत्तम क्या है ? अच्छा चाल चलन । कौन सुख त्यागने योग्य है ? स्त्री सम्बन्धी सुख सब से बड़ा दान क्या है ? सर्वदा का अभय दान ।

शत्रोर्महाशत्रुतमोस्ति को वा, कामः सकोपानृतलोभतृष्णः ।
न पूर्यते को विषयः स एव, किं दुःखमूलंममताभिधानम् ॥२१॥

अर्थ-शत्रुओं में महाशत्रु कौन है ? क्रोध, असत्, लोभ और तृष्णारूपी इच्छा । भोगने से किस की तृप्ति नहीं होती है? काम अर्थात् वांछाओं की । दुःखकी जड़ क्या है ? ममता ।

किं मण्डनं साक्षरता मुखस्य, सत्यं च किं भूतहितं सदैव ।
किं कर्म कृत्वा नहिं शोचनीयम्, कामारिकंसारिसमर्चनाख्यम् २२

अर्थ-मुख की शोभा क्या है ? विद्या । सत्य क्या है ? प्राणियों का निरन्तर हित करना । ऐसा कौन सा कर्म है जिसको करके सोच नहीं करना पड़ता है ? हरिहर की आराधना ।

कस्यास्ति नाशे मनसो हि मोक्षः, क्व सर्वथा नास्ति भयंविमुक्तौ ।
शल्यं परं किं निजमूर्खतैव, के के ह्युपास्या गुरुदेववृद्धाः ॥२३॥

अर्थ—किस के नाश होने पर मोक्ष है ? मन के । कहां किसी प्रकार का भय नहीं है ? मोक्ष में । सब से बड़ा कंटक क्या है? अपनी मूर्खता । किस किस की उपासना करनी चाहिये ? देवता गुरु और वृद्धों की ।

उपस्थिते प्राणहरे कृतान्ते, किमाशु कार्यं सुधिया प्रयत्नात् ।

वाक्कायचित्तैः सुखदं यमघ्नं, मुरारिपादाम्बुज चिन्तनं च ॥२४॥

अर्थ--प्राण हरनेवाली मृत्यु के आनेपर बुद्धिमान् मनुष्य को यत्नपूर्वक शीघ्रता से क्या करना चाहिये ? मन, वचन और देह से ईश्वर के चरण कमलों का ध्यान जो यम को नाश करने वाला और सुख देनेवाला है -

के दस्यवः सन्ति कुवासनाख्याः, कः शोभते यः सदसि प्रविद्यः।
मातेवकाया सुखदा सुविद्या, किमेधते दानवसात्सुविद्या ॥ २५॥

अर्थ--चोर कौन है ? बुरी वासनायें । सभा में कौन शोभा को प्राप्त होता है ? विद्वान्। माता के समान सख देनेवाली कौन है ? सद्विद्या। कौन सी वस्तु दान करने से बढ़ती है ? विद्या ।

कुतो हि भीतिस्सततं विधेया, लोकापवादाद्भवकाननाच्च ।
कोवास्ति बन्धुः पितरश्चकोवा, विपत्सहायः परिपालका ये॥२६॥

अर्थ--हमेशा किस बात से डरना चाहिये ? लोकनिंदा और संसार से । बन्धु कौन है ? जो विपत्ति में सहायता करे । पिता समान कौन है ? जो पालन करे ।

बुध्वा न बोध्यं परिशिष्यते किं, शिवप्रसादं सुखबोधरूपम् ।
ज्ञाते तु कस्मिन् विदितं जगत्स्यात्, सर्वात्मके ब्रह्मणिपूर्णरूपं।२७

अर्थ-वह क्या है जिसके जानने पर फिर वस्तु जानने लायक नहीं रहती है ? ज्ञानरूपी आनन्दमय आत्मतत्व । वह क्या है ? जिसके जानने पर सब जगत् जानलिया जाता है पूर्णरूप ब्रह्म जो सब की आत्मा है।

किं दुर्लभं सद्गुरुरस्ति लोके, सत्संगतिर्ब्रह्मविचारणञ्च ।
त्यागोहि सर्वस्व शिवात्मबोधः, को दुर्जयस्सर्वजनैर्मनोजः ।२८।

अर्थ--जगत् में दूर्लभ क्या है ? सद्गुरु, ब्रह्म का विचार, सङ्गति आनन्दमय आत्मा का ज्ञान और संसार की सब वस्तुओं का त्याग ऐसी क्या वस्तु है ? जो बडी कठिनाई से जीती जाती है कामदेव

पशो: पशु: को न करोति धर्म्म, मधीत शास्त्रोऽपि न चात्मबोध: ।
किं तद्विषभाति सुधोपमं स्त्री, के शत्रवो मित्रवदात्मजाद्या: २९

अर्थ-पशुओं का पशु कौन है? जिसने शास्त्र पढकर भी आत्मबोध प्राप्त नहीं किया है और जो धर्म नहीं करता है। वह कौनसा है जो अमृत के समान दिखाई देता है? वह विष स्त्री है। वे कौन स शत्रु हैं जो मित्र समान दिखाई देते हैं? पुत्र पौत्रादि।

विद्युच्चलं किं धनयौवनायु, र्दानं परं किं च सुपात्रदत्तम् ।
कण्ठंगतैरप्यसुभिर्न कार्यम्, किं किं विधेयं मलिनं शिवार्चा ॥ ३० ॥

अर्थ-बिजली के समान चंचल वस्तु क्या है? धन यौवन और आयु। सबसे बड़ा दान क्या है। जो सुपात्र को दिया जाय कंठगत प्राण होने पर भी क्या नहीं करना चाहिये? पाप। क्या करना चाहिये शिव की पूजा अर्थात् ईश्वर-भजन।

अहर्निशं किं परिचिन्तनीयं, संसारमिथ्या शिवात्मतत्त्वम् ।
किं कर्म यत्प्रीतिकरं मुरारे, क्वास्था न कार्या सततं भवाब्धौ ।३१।

अर्थ-रात दिन क्या चिन्तना करना चाहिये! संसार मिथ्या है और आनन्दमय आत्मा ही सत्य है। कार्य कौनसा अच्छा है? जो ईश्वर को प्रसन्न करने वाला हो। किस में बुद्धि स्थिर नहीं करनी चाहिये संसार सागर में।

कण्ठं गता वा श्रवणं गता वा, प्रश्नोत्तराख्यामणिरत्नमाला ।
तनोतु मोदं विदुषां सुरम्यं, रमेशगौरीशकथेव सद्यः ॥ ३२ ॥

अर्थ-यह प्रश्नोत्तर नाम की रत्नमाला सुनने और पढने पर विद्वानों को हरिहर कथा के समान बड़ा आनन्द देता है।



❀ श्रीमती महारानी मन्दालसा का उपदेश ❀

शुद्धोऽसि रे तात ! नतेऽस्ति नाम कृतं हि ते कल्पनयाऽधुनैव ।
पञ्चात्मकं देहमिदंतवैतन्नैवास्य त्वं रोदिषि कस्य हेतोः ॥ १॥

अर्थ-हे पुत्र ! तू शुद्ध है, तेरा नाम नहीं है यह नाम अभी कल्पना से रक्खा गया है यह देह पञ्चभूतों का है तेरा नहीं, न तू इसका है, तू किस लिये रोता है ॥ १ ॥

नै वा भवान् रोदिति वै स्वजंन्मा शब्दायमासाद्य महीशसूनुम्
विकल्प्यमाना विविधागुणास्तें गुणाश्च भौताःसकलेन्द्रियेषु ॥२॥

अर्थ-अथवा तू नहीं रोता है यह शब्द तो राजा का पुत्र जो देह है उसको बतला रहा है, इन्द्रियो में भूतों के गुण हैं तेरे नहीं ।२।

भूतानि भूतैः परिदुर्बलानि वृद्धिसमायान्ति यथेह पुंसः ।
अन्नाम्बुदानादिभिरेव कस्य नतेऽस्ति वृद्धिर्नच तेस्ति हानिः॥३॥

अर्थ-जिस प्रकार बाह्य भूत भूतों के योग से वृद्धि को प्राप्त होते हैं उसी प्रकार अन्न जलादि के दान से पुरुष के शरीरस्थ भूतों की वृद्धि होती है, तेरी न वृद्धि है न हानि है ॥ ३ ॥

त्वं कञ्चुके शीर्यमाणे निजेऽस्मिंस्तस्मिंश्चदेहे मूढतां मा व्रजेथाः।
शुभाशुभैः कर्मभिर्देहमेतन्मदादिमूढैः कञ्चुकस्ते पिनद्धः ॥ ४॥

अर्थ-देह रूपी कपड़े के फटने से तू मूर्खता को मत प्राप्त हो शुभाऽशुभ कर्मों से यह देह रूपी कपड़ा बना है, मदआदिकों से इस में फस गया है ॥ ४ ॥

तातेति किञ्चित्तनयेतिकिञ्चिदम्बेति किञ्चदयितेतिकिञ्चित् ।
ममेति किंचिन्नममेति किंचित्त्वं भूतसंघं बहुमानयेथाः ॥ ५ ॥

अर्थ-किसी को पिता किसी को पुत्र किसी को माता किसी को स्त्री किसी को मेरा और किसी को पराया मत समझ यह सब भूतों का समूह है ॥ ५ ॥

दुःखानि दुःखोपशमाय भोगान् सुखाय जानाति विमूढचेताः।
तान्येव दुःखानि पुनः सुखानि जानात्यविद्वान् सुविमूढचेताः ॥६॥

अर्थ-मूर्ख पुरुष दुःख ही को दुःख की शान्ति का उपाय समझता है और भोगों को जो बार २ दुःख देने वाले हैं सुख का उपाय समझता है ॥ ६ ॥

हासोऽस्थिसन्दर्शनमक्षियुग्ममत्युज्ज्वलं तर्जनमङ्गनायाः।
कुचादि पीनं पिशितं घनं तत् स्थानं रतेः किं नरकं न योषित् ७

अर्थ-हँसी हड्डियों का दिखाना है, सुन्दर नेत्रों का जोड़ा स्त्री का तर्जन (कोड़ा है) मोटे स्तन मांस के लौंदे हैं, रति (समागम करने) का स्थान गन्दा है क्या स्त्री नरक नहीं है ! ॥ ७ ॥

यानं क्षितौ यानगतञ्च देहं देहेपि चान्यः पुरुषो निविष्ठः।
ममत्वबुद्धिर्न तथा यथा स्वे देहेतिमात्रं बत मूढतैषा ॥ ८ ॥

अर्थ-पृथ्वी पर यान (सवारी) है सवारीमें देह, देह में भी और पुरुष बैठा हुआ है ममता जैसी देह में ऐसी उन में नहीं यह बड़ी भारी मूर्खता है ॥ ८ ॥

शक्रार्कयमसोमानां तद्वद्वायोर्महीपतिः।
रूपाणि पञ्च कुर्वीत महीपालनकर्मणि ॥ १ ॥

अर्थ-पृथिवी की रक्षा के लिये राजा इन्द्र, सूर्य्य, यम, चन्द्रमा, वायु इन पांचो के रूपोंको धारण करे ॥ १ ॥

यथेन्द्रश्चतुरो मासान् तोयोत्सर्गेण भूगतम्।
आप्याययेत्तथा लोकं परिहारैर्महीपतिः ॥ २ ॥

अर्थ-जैसे इन्द्र (मेघ) चार मास वर्षा करने से पृथिवी को प्रसन्न करता है इसी प्रकार उपहारों से राजा प्रजा को प्रसन्न करे ॥ २ ॥

मासानष्टौ यथा सूर्य्यस्तोयं हरति रश्मिभिः।
सूक्ष्मेणैवाभ्युपायेन तथा शुल्कादिकं नृपः॥ ३ ॥

अर्थ–जैसे सूर्य आठ मास किरणों से जल हरता है इसीप्रकार सूक्ष्म उपाय से राजा कर लेवे ॥ ३ ॥

यथा यमः प्रियेद्वेष्य प्राप्तकाले नियच्छति ।
तथा प्रियाप्रिये राजा दुष्टादुष्टे समो भवेत् ॥ ४ ॥

अर्थ–जैसे यम पुण्यात्मा और पापी को समय पर मारता है इसी प्रकार दुष्ट और साधु को दण्ड देने में राजा सम होवे ॥ ४ ॥

पूर्णेन्दुमालोक्य तथा प्रीतिमान जायते नरः ।
एवं यत्र पूजाः सर्वा निर्वृत्तास्तच्छशिवव्रतम् ॥ ५ ॥

अर्थ–जैसे पूर्ण चन्द्रमा के दर्शन से प्रजा को प्रसन्नता होती है इसी प्रकार जिस के दर्शन से प्रसन्न हो वह चन्द्रमा का व्रत है ॥ ५ ॥

मारुतः सर्वभूतेषु निगूढश्चरते यथा ।
एवं नृपश्चरेच्चारैः पौरामात्यादिबन्धुषु ॥ ६ ॥

अर्थ–जैसे पवन सब भूतों में गुप्त होकर विचरता है इसी प्रकार पौर मन्त्री और सम्बन्धियों में गुप्त दूतों के द्वारा राजा विचरे ॥ ६ ॥

न लोभाद्वा न कामाद्वा नार्थाद्वा यस्य मानसम् ।
यथान्धः कृष्यते वत्स ! स राजा स्वर्गमृच्छति ॥ ७ ॥

अर्थ–अन्धे के सदृश जिस राजा का मन लोभ से, काम से, वा धन से नहीं खिचता वह राजा स्वर्ग को प्राप्त होता है ॥ ७ ॥

उत्पथग्राहिणो मूढान् स्वधर्माच्चलतो नरान् ।
यः करोति निजे धर्मे स राजा स्वर्गमृच्छति ॥ ८ ॥

अर्थ–अपने धर्म को त्याग कर कुमार्ग में चलते हुए मनुष्यों को जो अपने २ धर्म में स्थित रखता है वह राजा स्वर्ग को प्राप्त होता है ८

वर्णधर्मा न सीदन्ति यस्य राज्ये तथाश्रमाः ।
वत्स ! तस्य सुखं प्रेत्य परत्रेह च शाश्वतम् ॥ ९ ॥

अर्थ–जिस राजा के राज्य में वर्णों और आश्रमो के धर्म शिथिल

नहीं होते, हे पुत्र ! उसको इस लोक और परलोक में निर्विघ्न सुख प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

एतद्राज्ञः परं कृत्यं तथैतत्सिद्धिकारकम् ।
स्वधर्मस्थापनं नृणां चाल्यंते यत्कुबुद्धिभिः ॥ १० ॥

अर्थ—यही राजा के लिये परमकर्त्तव्य है यही सिद्धिकारक है जो मनुष्यों को अपने २ धर्म में स्थापन करता है क्योंकि मूर्ख पुरुष अपनी मूर्खता से इसको बिगाड़ते रहते हैं ॥ १० ॥

पालनेनैव भूतानां कृतकृत्यो महीपतिः ।
सम्यक् पालयिता भागं धर्मस्याप्नोति यत्नतः ॥ ११ ॥

अर्थ—भूतों के पालने ही से राजा कृतकृत्य (कामयाब) होता है यत्न से भले प्रकार पालन करने वाला राजा प्रजाके धर्म का भागी होता है ॥ ११ ॥

अलर्क ने कहा हे माता ! आपने कहा कि वर्णों और आश्रमों के धर्म का पालन करना क्षत्रिय का परम धर्म है आप कृपा करके मुझे वर्णों और आश्रमों के धर्म बतलावें ।

मातोवाच—

दानमध्ययनं यज्ञो ब्राह्मणस्य त्रिधा मतः ।
नान्यश्चतुर्थो धर्मोस्ति पुत्र ! तस्यापदं विना ॥ १ ॥

अर्थ—दान, अध्ययन यज्ञ यह तीन धर्म ब्राह्मण के हैं, हे पुत्र! विपत्ति के विना ब्राह्मण का चौथा धर्म नहीं है ॥ १ ॥

याजनाध्यापने शुद्धे तथा पूतपरिग्रहः ।
एषा सम्यक् समाख्याता त्रिविधा चास्य जीविका ॥ २ ॥

अर्थ—यज्ञ कराना, शुद्ध पुरुषों को विद्या पढ़ाना पवित्र पुरुषों से दान लेना यह तीन जीविकार्थ है ॥ २ ॥

दानमध्ययनं यज्ञः क्षत्रियस्याप्यनं त्रिधा ।

धर्मः प्रोक्तः क्षितेरक्षा शस्त्राजीवञ्च जीविका ॥ ३॥

अर्थ--दान, अध्ययन, यज्ञ क्षत्रिय के भी यही तीन धर्म हैं शस्त्र-धारण करके पृथिवी की रक्षा करनी जीविका है ॥ ३ ॥

दानमध्ययनं यज्ञो वैश्यस्यापि त्रिधैवसः ।
वाणिज्यं पाशुपाल्यञ्च कृषिश्चैवास्य जीविका ॥४ ॥

अर्थ--वैश्य के भी यही तीन धर्म हैं, वाणिज्य, पशुरक्षा, और खेती, यह तीन जीविकार्थ हैं ॥ ४ ॥

दानं यज्ञोथ शुश्रूषा द्विजातीनां त्रिधा मता ।
व्याख्यातः शूद्रधर्मोपि जीविका कारुकर्म च ॥ ५ ॥

अर्थ--दान यज्ञ, और द्विजातियों की सेवा यह तीन शूद्र के धर्म हैं, कारुकर्म (शिल्पविद्या) इसकी जीविका है ॥ ५ ॥

तद्वद्द्विजातिशुश्रूषा पोषणं क्रयविक्रयौ ।
वर्णधर्मास्त्विमे प्रोक्ताः श्रूयन्तां चाश्रमाश्रयाः ॥ ६ ॥

अर्थ--इसी प्रकार द्विजातियों की सेवा पशु, पालन, क्रय विक्रय (मोललेना बेचना) यह भी शूद्र के धर्म हैं। यह वर्णों के धर्म हैं, आश्रमों के धर्म सुन--॥ ६ ॥

स्ववर्णधर्मात् संसिद्धिं नरः प्राप्नोति न च्युतः ।
प्रयाति नरकं प्रेत्य प्रतिषिद्धनिषेवणात् ॥ ७ ॥

अर्थ--अपने वर्ण के धर्म से ही पुरुष सिद्धि को प्राप्त होता है वर्ण धर्म से गिरा हुआ पुरुष सिद्धि को नहीं प्राप्त होता है, प्रत्युत निषिद्ध वस्तुओं के सेवन से मरकर नरक को प्राप्त होता है ॥ ७ ॥

यावत्तु नोपनयनं क्रियते वै द्विजन्मनः ।
कामचेष्टोतिभक्ष्यश्च तावद् भवति पुत्रक ! ॥ ८ ॥

अर्थ--हे पुत्र ! जबतक द्विजाति का उपनयन नहीं किया जाता है तबतक खेलने खाने और बोलने में कामचार (स्वतंत्र) है ॥८॥

कृतोपनयनः सम्यग् ब्रह्मचारी गुरोर्गृहे ।
वसेत्तत्र च धर्मोऽस्य कथ्यते तं निबोध मे ॥ ९ ॥

अर्थ-उपनयन करके ब्रह्मचारी गुरु के घर में बसे। वहां पर उस का जो धर्म है वह तू सुन ॥ ९॥

स्वाध्यायोऽथाग्निशुश्रूषा स्नानं भिक्षाटनं तथा ।
गुरोर्निवेद्य तच्चाद्यमनुज्ञातेन सर्वदा ॥ १० ॥

अर्थ--स्वाध्याय, अग्निहोत्र, स्नान, सदा भिक्षा करके गुरु के अर्पण करके गुरु की आज्ञा से भोजन करे ॥ १० ॥

गुरोः कर्मणि सोद्योगः सम्यक् प्रीत्युपपादनम् ।
तेनाहूतः पठेच्चैव तत्परो नाऽन्यमानसः ॥ ११ ॥

अर्थ--यत्न से गुरु सेवा करे, गुरु को भली प्रकार प्रसन्न करे गुरु के बुलावे पर पढ़े गुरु के चरणों में तत्पर रहकर अन्य विषयों से चित्त को हटाता हुआ—॥ ११ ॥

एकं द्वौ सकलान् वापि वेदान् प्राप्य गुरोर्मुखात् ।
अनुज्ञातोऽथ वन्दित्वा दक्षिणां गुरवे ततः ॥ १२ ॥

अर्थ=एक, दो या सब वेदों को गुरुमुख से पढ़ आज्ञा ले गुरु दक्षिणा दे नमस्कार करे— ॥ १२ ॥

गार्हस्थ्याश्रमकामस्तु गृहस्थाश्रममावसेत् ।
वानप्रस्थाश्रमं वापि चतुर्थं चेच्छयात्मनः ॥ १३ ॥

अर्थ-अपनी इच्छानुसार गृहस्थ वानप्रस्थ वा सन्यासाश्रम को ग्रहण करे ॥ १३ ॥

तत्रैव वा गुरोर्गेहे द्विजो निष्ठामवाप्नुयात् ।
गुरोरभावे तत्पुत्रे तच्छिष्ये तत्सुतं विना ॥ १४ ॥

अर्थ—या गुरु ही के घर में ब्रह्मचर्य्य को पालन करता हुआ मृत्यु को प्राप्त होवे, गुरु के अभाव में उसके पुत्र के घर में और पुत्र

के अभाव में गुरु के शिष्य के घर में शेष ब्रह्मचर्य को पूर्ण करे ॥ १४

शुश्रूषुर्निरभिमाना ब्रह्मचर्य्याश्रमं वसेत् ।
उपावृत्तस्ततस्तस्माद् गृहस्थाश्रमकाम्यया ॥ १५ ॥
ततः समां शुद्धकुलां तुल्यां भार्यामरोगिणीम् ।
उद्वहेन्न्यायतोऽव्यंगी गृहस्थाश्रमकारणात् ॥ १६ ॥

अर्थ--अभिमान को त्यागकर सेवा करता हुवा ब्रह्मचर्य्याश्रम में बसे, गुरुकुल से समावर्तन करके गृहस्थाश्रम की इच्छा से अपने से पृथक् गोत्र और कुल वाली अपने सदृश रोग रहित पूर्णाङ्ग कन्या से गृहस्थ धर्म को पूर्ण करने के लिये विवाह करे ॥ १५,१६ ॥

स्वकर्मणा धनं लब्ध्वा पितृदेवातिथींस्तथा ।
सम्यक् सम्प्रीणयन् भक्त्या पोषयेच्चाश्रितांस्तथा ॥ १७ ॥

अर्थ--अपने २ वर्णाश्रम के उचित कर्म से धन उपार्जन करके भक्ति से पितर, देवता, अतिथियों की भली प्रकार तृप्त करता हुवा अपने आश्रितों को पाले ॥ १७ ॥

भृत्यात्मजान् जामयोथ दीनान्धपतितानपि ।
यथा शक्त्यन्नदानेन पक्षिणः पशवस्तथा ॥ १८ ॥

अर्थ--भृत्य, पुत्र, जामि (मावसी, फुफी आदि) दीन, अन्ध पतितों तथा पक्षि और पशुओं को यथाशक्ति अन्न दान से पालन करे। १८

एष धर्मो गृहस्थस्य ऋतावभिगमस्तथा ।
पञ्चयज्ञविधानन्तु यथाशक्ति न हापयेत् ॥ १९ ॥

अर्थ--यह गृहस्थ का धर्म है वैसे ही ऋतु काल में स्त्रीसंग भी गृहस्थ का धर्म है, जहांतक सामर्थ्य हो पञ्चयज्ञ विधि को न त्यागे ॥ १९ ॥

पितृदेवातिथिज्ञातिभुक्तशेषं स्वयं नरः ।
भुञ्जीत च समं भृत्यैर्यथाविभवमादृतः ॥ २० ॥

अर्थ पितर, देवता, अतिथि और सम्बन्धियों के भोजन कर

चुकने पर नौकरों के सहित धनानुसार नाना प्रकार भोजन करे-२०

एषतूद्देशतः प्रोक्तो गृहस्थस्याश्रमो मया ।
वानप्रस्थस्य धर्मन्ते कथयाम्यवधार्यताम् ॥ २१ ॥

अर्थ--यह गृहस्थाश्रम मैंने संक्षेप से कहा अब वानप्रस्थ का धर्म कहता हूं सो तू श्रवण कर ॥ २१ ॥

अपत्यसन्ततिं दृष्ट्वा प्राज्ञो देहस्य क्षीणताम् ।
वानप्रस्थाश्रमं गच्छेदात्मनः शुद्धिकारणात् ॥ २२ ॥

अर्थ-पुत्र के पुत्र को देख कर और अपने देह की अवनति देखकर मन की शुद्धि के लिये वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करे ॥ २२ ॥

तत्रारण्योपभोगश्च तपोभिश्चानुकर्षणम् ।
भूमौ शय्या ब्रह्मचर्यं पितृदेवातिथिक्रिया ॥ २३ ॥

अर्थ-वहां वन की वस्तुओं से निर्वाह करे, तप से शरीर को सुखावे पृथिवी पर सोवे, ब्रह्मचर्य को पालन करता हुवा पितर, देवता अतिथियों की सेवा करे ॥ २३ ॥

होमस्त्रिषवणस्नानं जटावल्कलधारणम् ।
योगाभ्यासः सदा चैव वन्यस्नेहनिषेवणम् ॥ २४ ॥

अर्थ-होम करे, तीन काल स्नान करे, जटा और वृक्षों की छाल को धारण करे, सदा योगाभ्यास करे और बनवासियों के साथ स्नेह करे ॥ २४ ॥

इत्येष पापशुद्ध्यर्थमात्मनश्चोपकारकः ।
वानप्रस्थाश्रमस्तस्माद् भिक्षोस्तु चरमोऽपरः ॥ २५ ॥

अर्थ-अपने पापों की शुद्धि के लिये और सर्वभूतों के उपकार के लिये यह वानप्रस्थ आश्रम है, इस से आगे अन्तिम आश्रम संन्यासी का है ॥ २५ ॥

चतुर्थस्य स्वरूपन्तु श्रूयतामाश्रमस्य मे ।

य: स्वधर्मोऽस्य धर्मज्ञैः प्रोक्तस्तात ! महात्मभिः ॥२६॥

अर्थ-अब चतुर्थ आश्रम का स्वरूप और धर्मज्ञ महात्माओं ने जो इसका धर्म कहा है सो तू सुन ॥ २६ ॥

सर्वसङ्गपरित्यागो ब्रह्मचर्यमकोपता ।
यतेन्द्रियत्वमावासे नैकस्मिन् वसतिश्चिरम् ॥ २७ ॥

अर्थ-सब के संग का त्याग, ब्रह्मचर्य, क्रोध न करना, इन्द्रियों को जीतना, एक स्थान में देर तक न रहना ॥ २७ ॥

अनारम्भस्तथाहारो भैक्षान्नेनैककालिना ।
आत्मज्ञानावबोधेच्छा तथाचात्मावलोकनम् ॥ २८ ॥

अर्थ-किसी कामको आरम्भ न करना, एक काल के अन्न से भोजन करना, आत्मज्ञान की इच्छा और आत्मा का ध्यान ॥ २८ ॥

चतुर्थेत्वाश्रमे धर्मो मयायं ते निवेदितः ।
सामान्यमन्यवर्णानामाश्रमाणां च मे शृणु ॥ २९ ॥

अर्थ-यह मैंने चतुर्थ आश्रम का धर्म कहा है । अब वर्णों और आश्रमों के साधारण धर्म को तू सुन ॥ २९ ॥

सत्यं शौचमहिंसा च अनसूया तथा क्षमा ।
आनृशंस्यमकार्पण्यं सन्तोषश्चाष्टमो गुणः ॥ ३० ॥
एते संक्षेपतः प्रोक्ता धर्मा वर्णाश्रमेषु ते ।
एतेषु च स्वधर्मेषु स्वेषु तिष्ठेत्समन्ततः ॥ ३१ ॥

अर्थ-सत्य, शौच, अहिंसा अनसूया (हसद न करना), क्षमा, आनृशंस्य (किसी को दुख न देना); अकार्पण्य (उदारता), आठवां सन्तोष, सब वर्णों और आश्रमों के यह संक्षेप से धर्म कहे हैं, इन धर्मों में और अपने २ वर्ण आश्रम के धर्मों में पुरुष सदा स्थित रहे ॥ ३० ॥ ३१ ॥

यश्चोल्लङ्घ्य स्वकं धर्मं स्ववर्णाश्रमसंज्ञितम् ।
नरोन्यथा प्रवर्त्तेत सदण्ड्यो भूभृतो भवेत् ॥ ३२ ॥

अर्थ-अपने वर्ण आश्रम के धर्मको उल्लंघन करके जो पुरुष विरुद्ध आचरण करे उसको दण्ड देना राजा का धर्म है ॥ ३२ ॥

ये च स्वधर्मसन्त्यागात्पापं कुर्वन्ति मानवाः ।
उपेक्षतस्तान्नृपते रिष्टापूर्त्तं प्रणश्यति ॥ ३३ ॥

अर्थ-अपने धर्म का त्याग करके जो मनुष्य पाप करते हैं उनकी उपेक्षा करने वाले राजा के यज्ञ, दान, आदि सब नष्ट होजाते हैं ॥ ३३॥

तस्माद्राज्ञा प्रयत्नेन सर्वे वर्णाः स्वधर्मतः ।
प्रवर्तन्तांऽन्यथा दण्डयाः स्थाप्याश्चैवस्वकर्मणा ॥३४॥

अर्थ-इसलिये अपने धर्म से विरुद्ध आचरण करने वाले पुरुषों को राजा यत्न से दण्ड देकर अपने २ कर्मों मे स्थापन करे ॥ ३४ ॥

वत्स ! गार्हस्थ्यमादाय नरःसर्वमिदं जगत ।
पुष्णाति तेन लोकांश्च स जयत्यभिवाञ्छितान् ॥१॥

अर्थ-हे पुत्र ! गृहस्थाश्रम में स्थित होकर मनुष्य सारे जगत् को पालता है उस से वाञ्छित सुखों को प्राप्त होता है ॥ १ ॥

पितरो मुनयो देवा भूतानि मनुजास्तथा ।
कृमिकीटपतङ्गाश्च वयांसि पशवोऽसुराः ॥ २ ॥
गृहस्थमुपजीवन्ति ततस्तृप्तिं प्रयान्ति च ।
मुखं चास्य निरीक्षन्ते अपि नो दास्यतीति वै ॥ ३ ॥

अर्थ-पितर, मुनि, देवता, अन्य जीव, मनुष्य, कृमि कीट, पतं पक्षि और पशु गृहस्थ ही से जीविका पाते हैं उसीसे तृप्ति को प्रागत होते हैं इस के मुख को देखते रहते हैं कि हमें देवेगा ॥ २, ३ ॥

सर्वस्याधारभूतेयं वत्स ! धेनुस्त्रयीमयी ।
यस्यां प्रतिष्ठितं विश्वं विश्वहेतुश्च या मता ॥ ४ ॥

अर्थ-हे पुत्र ! वेद रूपी गौ सब का आधार है जिस में सारा जगत् स्थित है और जो जगत् का कारण है ॥ ४ ॥

ऋक्पृष्ठासौ यजुर्मध्या सामवक्त्राङ्गिरोऽधरा ।
इष्टापूर्तविषाणा च साधुसूक्ततनूरुहा ॥ ५ ॥

शान्तिपुष्टिक्षीरघृता वर्णपादप्रतिष्ठिता ।
आजीव्यमाना जगतां साक्षया नापचीयते ॥ ६ ॥

अर्थ-ऋग्वेद जिसकी पीठ यजुर्वेद जिसका पेट है सामवेद मुख के स्थान और अथर्ववेद ओष्ठों के स्थान है, इष्ट पूर्त्त यज्ञ सींग हैं सूक्त बाल (लोम) शान्ति दुग्ध और पुष्टि जिसका घृत है, वर्ण रूपी पादों पर स्थित है सारे जगत् को जीवन देती हुई भी दुर्बल नहीं होती ॥ ५ ॥ ६ ॥

स्वाहाकारस्वधाकारौ वषट्कारश्च पुत्रक !
हन्तकारस्तथाचान्यस्तस्याः स्तनचतुष्टयम् ॥ ७ ॥

अर्थ--स्वाहाकार स्वधाकार, वषट्कार, हन्ताकार, यह चार उस के स्तन हैं ॥ ७ ॥

स्वाहाकारस्तनं देवाः पितरश्च स्वधामयं ।
मुनयश्च वषट्कारमुपजीवन्ति तत्स्तनम् ॥ ८ ॥

अर्थ--स्वाहाकार स्तन को देवता, स्वधाकार को पितर और वषट्कार को मुनि पीते हैं ॥ ८ ॥

हन्तकारं मनुष्याश्च पिबन्ति सततं स्तनम् ।
एवमाप्याययत्येषा वत्स ! धेनुस्त्रयीमयी ॥ ॥ ९ ॥

अर्थ-हन्तकार रूपी स्तन को मनुष्य पीते हैं अर्थात् देव पूजा स्वाहा शब्द से, पितृ पूजा स्वधा शब्द से, मुनि पूजा वषट् शब्द से होती है अन्य सामान्य मनुष्यों को जो अन्नादि दिये जाते हैं वे हन्त शब्द से दिये जाते हैं इस प्रकार वेद रूपी धेनु सब को तृप्त कर रही है ॥ ९ ॥

तस्या उच्छेदकर्त्ता च यो नरोऽत्यन्तपापकृत ।
स तमस्यन्धतामिस्रे तामिस्रे च निमज्जति ॥ १० ॥

अर्थ-जो पुरुष उसका उच्छेद (वेद मार्ग का भ्रंश) करता है वह अत्यन्त पापी है अन्धतामिश्र नाम नरक अर्थात् अज्ञान प्रधान योनियों को प्राप्त होता है ॥ १० ॥

यश्चेमां मानवो धेनुं स्वैर्वत्सैरमरादिभिः।
पाययत्युचिते काले स स्वर्गायोपद्यते ॥ ११ ॥

अर्थ-जो पुरुष इस धेनु से देवादि बछड़ों को समय २ दूध पिलाता है वह स्वर्ग (सुख) को प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

तस्मात्पुत्र ! मनुष्येण देवर्षिपितृमानवाः।
भूतानि चानुदिवसं पोष्याणि स्वतनुर्यथा ॥ १२ ॥

अर्थ-इसलिये हे पुत्र ! गृहस्थ को चाहिये कि प्रतिदिन देवता ऋषि, पितर और मनुष्यों को अपने शरीर समान पाले ॥ १२ ॥

तथाच-एव पुत्र ! गृहस्थेन देवताः पितरस्तथा।
सम्पूज्या हव्यकव्याभ्यामन्नेनातिथिवान्धवाः ॥ १ ॥
भूतानि भृत्याः सकलाः पशुपक्षिपिपीलिकाः।
भिक्षवो याचमानाश्च ये चान्ये वसता गृहे ॥ २ ॥
सदाचारवता तात ! साधुना गृहमेधिना।
पापं भुङ्क्ते समुल्लङ्घ्य नित्यनैमित्तिकी क्रियाः ॥ ३ ॥

हे पुत्र ! घर में रहने वाले गृहस्थ को चाहिये कि सदाचारी और साधु (परोपकारी) बन कर नित्य उत्तमोत्तम अन्नों (भोजनों) से देवता, पितर, अतिथि, सम्बन्धि, सेवक, पशु, पक्षी, चींऊटी पर्यन्त जीवों की और इस के घर में जो संन्यासी भिक्षा लेने आये हों उन की नित्य पूजा करे जो गृहस्थ नित्य (सन्ध्यावन्दनादि) नैमित्तिक (गर्भाधानादि) कर्मों को त्याग कर भोजन करता है वह पाप करता है ॥ १, २, ३, ॥ अलर्क ने कहा हे मातः ! आप ने नित्य नैमित्तिक कर्म बतलाये अब मैं सदाचार सुनना चाहता हूं जिसके करने से पुरुष इस लोक और परलोक में सुख पाता है ॥ मातोवाच-

गृहस्थेन सदा कार्य्यमाचारपरिपालनम्।
नह्याचारविहीनस्य सुखमत्र परत्र वा ॥ १ ॥

अर्थ-हे पुत्र ! गृहस्थ को सदा आचार को पालना करनी चाहिये आचार हीन पुरुष को न इस लोक में सुख होता है और न परलोक में

यज्ञदानतपांसीह पुरुषस्य न भूतये ।
भवन्ति यः सदाचारं समुल्लङ्घ्य प्रवर्त्तते ॥ २ ॥

अर्थ–जो पुरुष सदाचार का त्याग करता है उसके किये हुये यज्ञ, दान, तप, कल्याणकारी नहीं होते ॥ २ ॥

दुराचारोहि पुरुषो नेहायुर्विन्दते महत् ।
कार्यो यत्नः सदाचार आचारो हन्त्यलक्षणम् ॥ ३ ॥

अर्थ–दुराचारी पुरुष दीर्घायु नहीं होता एवं सदाचार में यत्न करना चाहिये सदाचार बुरे लक्षणों को दूर कर देता है ॥ ३ ॥

तस्य स्वरूपं वक्ष्यामि सदाचारस्य पुत्रक !
तन्ममैकमनाः श्रुत्वा तथैव परिपालय ॥ ४ ॥

अर्थ–हे पुत्र ! मैं तुझे सदाचार का स्वरूप बतलाती हूं तू एकमन होकर सुन और उसी प्रकार उनका पालन कर ॥ ४ ॥

त्रिवर्गसाधने यत्नः कर्त्तव्यो गृहमेधिना ।
तत्संसिद्धौ गृहस्थस्य सिद्धिरत्र परत्र च ॥ ५ ॥

अर्थ–गृहस्थ को धर्म धन और काम इन तीनों की सिद्धि में यत्न करना चाहिये तीनों की सिद्धि से गृहस्थों को इस लोक और परलोक में सिद्धि है ॥ ५ ॥

पादेनार्थस्य पारत्र्यं कुर्यात् सञ्चयमात्मवान् ।
अर्धेन चात्मभरणं नित्यनैमित्तिकान्वितम् ॥ ६ ॥

अर्थ–अपने आय के चतुर्थांश से परलोक का साधन जो धर्म उसका सञ्चय करे और आधे से नित्य नैमित्तिक कर्म करता हुवा कुटुम्ब का पालन करे ॥ ६ ॥

पादश्चात्मार्थमायस्य मूलभूतं विवर्धयेत् ।
एवमाचरितः पुत्र ! अर्थः साफल्यमर्हति ॥ ७ ॥

अर्थ–आय के चतुर्थांश का सञ्चय करता हुवा उस सञ्चित मूल धन को बढाता रहे । हे पुत्र ! इस प्रकार वर्त्तने वाले पुरुष का धन सफल होता है ॥ ७ ॥

तद्वत् पापनिषेधार्थं धर्मः कार्यो विपश्चिता ।

परत्रार्थं तथैवान्यः काम्योऽत्रैव फलप्रदः ॥ ८ ॥

अर्थ-इसी प्रकार पापों को दूर करने के लिये और परलोक में सहायता के निमित्त बुद्धिमान् पुरुष धर्म करे इस लोक में फल सिद्धि के लिये सकाम कर्म भी करना चाहिये ॥ ८ ॥

प्रत्यपायभयात्काम्यस्तथान्यश्चाविरोधवान् ।
द्विधा कामोपि गतितस्त्रिवर्गस्याऽविरोधतः ॥ ९ ॥

अर्थ-त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) के साथ विरोध न होने से सकाम कर्मों को दो प्रकार का कहा है एक जो विरोध के भय से अर्थात् भीड़ पड़ने पर किया जावे और दूसरा जो विना विरोध के किया जावे ॥ ९ ॥

परस्परानुबन्धांश्च सर्वानेतान्विचिन्तयेत् ।
विपरीतानुबन्धांश्च धर्मादींस्तान शृणुष्वमे ॥ १० ॥

अर्थ-धर्म, अर्थ, काम इन तीनों के परस्पर सम्बन्धी बातों को सोच जिसप्रकार उनका परस्पर सम्बन्ध होता है वह तू सुन॥१०॥

धर्मो धर्मानुबद्धार्थो धर्मो नात्मार्थबाधकः ।
उभाभ्यां च द्विधा कामस्तेन तौ च द्विधा पुनः ॥११॥

अर्थ-धर्म ऐसा करे जो धर्मानुकूल धन का पैदा करने वाला हो, ऐसा धर्म न करे जो अपने धन को हानि पहुंचाने वाला हो, धर्म और धन इन दोनों से युक्त काम को भोगे और काम से युक्त धर्म और धन को पैदा करे ॥ ११ ॥

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत् ।
समुत्थाय तथा चम्य प्राङ्मुखो नियतः शुचिः ॥१२॥

अर्थ-ब्राह्म मुहूर्त्त में जागकर धर्म और अर्थ को सोचे तदनु उठकर स्नान कर पवित्र होकर पूर्व की ओर मुख करके आचमनकरे ॥१२॥

पूर्वां संध्यां सनक्षत्रां पश्चिमां सदिवाकराम् ।
उपासीत यथान्यायं नैतां जह्यादनापदि ॥ १३ ॥

अर्थ-पूर्व सन्ध्या तारों के देखते हुए और पश्चिम सन्ध्या सूर्यास्त से आरम्भ करके नियम से उपासना करे, बड़ेभारी दुःख के विना सन्ध्या का कभी त्याग न करे ॥ १३ ॥

असत्प्रलापमनृतं वाक्पारुष्यं च वर्जयेत्।
असच्छास्त्रमसद्वादमसत्सेवाञ्च पुत्रकः॥ १४ ॥

अर्थ-नीच पुरुषों से वार्त्तालाप न करे झूठ और कठोर वचन न बोले, असत्य ग्रन्थ न पढ़े, झूठा झगड़ा और नीच पुरुषों की सेवा त्यागे ॥ १४ ॥

सायं प्रातस्तथा होमं कुर्वीत नियतात्मवान्।
नग्नां परस्त्रियं नेक्षेत निन्दां कुर्यान्न कस्यचित्॥ १५॥

अर्थ-सायं प्रातः नियम से होम करे, परस्त्री को नग्न न देखे और किसी की निन्दा न करे॥ १५॥ ॥

पितृदेवमनुष्याणां भूतानां च तथार्चनम्।
कृत्वा विभवतः पश्चाद् गृहस्थो भोक्तुमर्हति॥ १६ ॥

अर्थ-यथा शक्ति पितर, देवता और अन्य मनुष्यों की पूजा कर के गृहस्थ को भोजन करना चाहिये ॥ १६ ॥

उपघातादृते दोषं नान्यस्योदीरयेद्बुधः।
प्रत्यक्षलवणं वर्ज्यमन्नमत्युष्णमेव च॥ १७॥

अर्थ-यावत् प्रबल कष्ट न पहुंचे तावत् दूसरे का दोष न बतलावे। केवल लवणमय (नमकीन) और उष्ण भोजन न करे॥ १७॥

गुरुणामासनं देयमभ्युत्थानादि सत्कृतम्।
अनुकूलं तथालापमभिवादनपूर्वकम्॥ १८॥

अर्थ-जब गुरु आवे तो उठकर आदर से आसन देवे और प्रणाम पूर्वक (अर्थात् "नमस्ते" कहकर) मृदु वचन बोले॥ १८॥

पन्था देयो ब्राह्मणानां राज्ञो दुःखातुरस्य च।
विद्याधिकस्य गुर्विण्या भारार्तस्य यवीयसः॥
मूकान्धबधिराणाश्च मत्तस्योन्मत्तकस्य च॥ १९॥

अर्थ-ब्राह्मण, राजा और दुःखिया उनके लिये मार्ग छोड़ देवे। विद्वान, गर्भिणी और सिरपर भार लिये हुए पुरुष, गूंगा, अंधा, बधिर और उन्मत्त यह वय में छोटे भी हों तो उनके लिये रास्ता छोड़ देवे॥ १९॥

उपानद्वस्त्रमाल्यादि धृतमन्यैर्न धारयेत्
उपवीतमलंकारं करकञ्चैव वर्जयेत् ॥ २० ॥

अर्थ-जूता, वस्त्र, माला, जनेऊ, आभूषण, घट, अन्य के वर्ते हुए न वर्ते ॥ २० ॥

चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां पञ्चदश्यां च पर्वसु।
तैलाभ्यंगं तथा भोगं योषितश्च विवर्जयेत् ॥ २१ ॥

अर्थ-चतुर्दशी, अष्टमी, पौर्णमासी और अमावस्या में तैल मर्दन और स्त्रीसङ्ग त्याग देवे ॥ २१ ॥

परदारान् गन्तव्याः पुरुषेण विपश्चिता।
इष्टापूर्त्तायुषां हन्त्री परदारगतिर्नृणाम् ॥ २२ ॥

अर्थ-बुद्धिमान् पुरुष कभी परस्त्री सङ्ग न करे, परस्त्री सङ्ग, पुरुषों के यश, दान, और आयु का नाशक है ॥ २२ ॥

न हीदृशमनायुष्यं लोके किञ्चन विद्यते।
यादृशं पुरुषस्येह परदाराभिमर्षणम् ॥ २३ ॥

अर्थ-लोक में आयुनाशक ऐसा अन्य कर्म नहीं है जैसा परस्त्री सङ्गत ॥२३॥

अध्येतव्या त्रयी नित्यं भवितव्यं विपश्चिता।
धर्मतो धनमाहार्यं यष्टव्यञ्चापि यत्नतः ॥ २४ ॥

अर्थ-प्रतिदिन वेद को पढ़े, धर्म पूर्वक धन उपार्जन करे और यत्न पूर्वक यज्ञ करे ॥ २४ ॥

यच्चापि कुर्वतो नात्मा जुगुप्सामेति पुत्रक ?
तत्कर्तव्यमशङ्केन यन्न गोप्यं महाजने ॥ २५ ॥

अर्थ-जिस काम को करते हुवे आत्मा में जुगुप्सा [घृणा] न हो और जो कर्म महात्माओं के सन्मुख छिपाना न पड़े उसको निशङ्क होकर करे ॥ २५ ॥

एवमाचरतो वत्स ! पुरुषस्य गृहे सतः।
धर्मार्थकामसम्प्राप्त्या परत्रेह च शोभनम् ॥ २६ ॥

अर्थ-हे पुत्र ! एवं विध सदाचार करते हुवे का धर्म, अर्थ, और काम की प्राप्ति से इस लोक और परलोक में सदा यश होता है ।२६।

× * + * ×

॥ ओ३म् ॥

॥ धन्यवाद पूर्वक स्वीकार ॥

निम्नलिखित सज्जनोंको हार्दिक धन्यवाद है जिन्होंने ग्रन्थमाला की सहायता की

बाबू केदारनाथ जी गोयनका दिल्ली ५) सेठ रामसहायमल घनश्यामदास जी मुम्बई ५) बा० श्रीलाल जी चमड़िया कलकत्ता ५) श्री स्वामी शिवपुरी जी बीकानेर ५) सेठ सीताराम मदनगोपाल जी मुम्बई ५) रायसाहब बाबूरामचन्द्रजी बैंकर दिल्ली ५) ठा० जसवन्त सिंहजी बर्म्मा हरियाना५) ठा० प्रतापसिंह जी बर्म्मा बीकानेर ५) ठा० बल्देव सिंह जी बर्म्मा जोधपुर ५) सेठ बंशीलाल अबीरचन्दजी जबलपुर ५) राजारामशरण सिंह जी चापा ३) राजराजेश्वरी बली जी दयाबाद ३) म० बंशीधर जी कुसुम्बी दास ३) म० हरनामदास कुसुम्बीदास जी मेरठ ३) मि० यम-ए-गुप्तासाहेब नागपुर २) डा० पेड़ामल जी अमृतसर २ रा० सा० पं० चन्द्रिकाप्रसाद जी शर्मा अजमेर २) रा० सा० सेठ गोविन्ददास जी जबलपुर २) ठा० लाल-तावत्त सिंह जी नीलगांव २) बाबू विजयबहादुर रायजादा साहेब जब० २) पं० विश्वनाथ शालिग्राम चांदा २) म० कुसमर्थ सिंह जी राबटी २) ठा० हनुमानसिंह जी वर्मा डुमरांव २) म० हीरालाल जी साहेब ए. सी. बरधा १) म० परशुराम व गयादीन जी मा० गु० भालेश्वर २०) सेठ मानिकचन्दजी वर्मा हिंगोली १०) योग ११२) शेषमग्रे ॥

आर्य ... के नियम।

१. उद्देश्य—वैदिक धर्म शिक्षार्थ, आर्ष (ऋषि) प्रणीत ग्रन्थों के प्रचारार्थ प्राचीन और नवीन ग्रन्थों को प्रकाशित करना है।

२. इसका वार्षिक मूल्य सर्वसाधारण से १॥) मान्यजनों से २) और सहायक सज्जनों से ५) तथा राजा महाराजाओं से उनके सम्मानार्थ १०) नियत है।

३. यह ग्रन्थमाला धार्मिक विषयों से विभूषित होकर प्रति दूसरे मास प्रकाशित होती है।

४. जो सज्जन १०) तक सहायतार्थ देंगे वे सहायक समझे जायंगे और उनका नाम सहायक श्रेणी में सधन्यवाद "सहायक श्रेणी में" वर्ष भर प्रकाशित किया जायगा।

❀ आवश्यक निवेदन ❀

हर्ष का विषय है कि ग्रन्थमाला का दूसरा वर्ष सानन्द समाप्त होगया। अब तृतीय भाग की प्रथम पुस्तक उन सज्जनों की सेवा में वी० पी० से भेजी जायगी. जिन महाशयों का द्वितीय वर्ष का चन्दा समाप्त होगया है। आशा है कि वैदिक धर्म के सच्चे प्रेमी वी० पी० स्वीकार कर अवश्य सहायता करेंगे। जिन सज्जनों के पास कोई भाग कदाचित् न पहुंचा हो, वे शीघ्र मंगालें। जिनका मूल्य नहीं आया है, वे कृपया मूल्य शीघ्र प्रेषित करें वा वी० पी० करने की आज्ञा देवें जिनको ग्रन्थमाला की ग्राहकता स्वीकार न हो वे अस्वीकार पत्र अवश्य भेज देवें। कागज व छपाई का भाव बहुत बढ़ गया है अतः विवश होकर मूल्य कुछ बढ़ाया गया है पूर्ण आशा है कि ग्राहकगण देने में संकोच न करेंगे॥ इत्यलम्॥

प्रकाशक आर्य ज्ञानोदय ग्रन्थमाला
पचपंव (चुनार) यू० पी० E.I.R.

भवदीय—
सूर्यदत्त शर्मा।